INTERNATIONAL ADVANCE JOURNAL OF ENGINEERING, SCIENCE AND MANAGEMENT (IAJESM)
July-December 2023, Submitted in September 2023, iajesm2014@gmail.com, ISSN -2393-8048
Multidisciplinary Indexed/Peer Reviewed Journal. SJIF Impact Factor 2023 =6.753

मुगलों की राजपूत नीति की स्थापना: विचार

Ravinder Pal Singh, Research Scholar, Department of History, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.)
Dr. Neelam Sharma, Assistant Professor, Department of History, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.)

परिचय

इस काल में शासक तुर्क और अफगान थे। आपने देखा होगा कि पूरे सल्तनत काल में विभिन्न तुर्की समूहों और अफ़गानों के बीच लगातार संघर्ष होता रहा। दिल्ली सल्तनत के विघटन के कारण विभिन्न क्षेत्रीय शक्तियों का उदय हुआ। इसलिए, जब 1526 में बाबर ने भारत पर आक्रमण किया तो सल्तनत की केंद्रीय शक्ति काफी हद तक कमजोर हो गई थी और कई स्वतंत्र राज्य थे। दिल्ली और आसपास के क्षेत्र सुल्तान इब्राहिम लोदी के अधीन थे। अन्य महत्वपूर्ण साम्राज्य थे गुजरात, मालवा, बंगाल, बीजापुर, गोलकुंडा, अहमदनगर, बरार, मेवाड़ और दक्षिण में विजयनगर साम्राज्य। इसके अलावा, बड़ी संख्या में छोटे स्वायत्त प्रमुख भी देश के विभिन्न हिस्सों में शासन कर रहे थे। इस पाठ में आप एक नए शासक वंश-मुगलों द्वारा भारत की विजय के बारे में अध्ययन करेंगे। मुगलों का नेतृत्व मध्य एशिया के एक सक्षम सैन्य कमांडर और प्रशासक जहीरुद्दीन मुहम्मद बाबर ने किया था। उनके उत्तराधिकारी धीरे-धीरे अखिल भारतीय साम्राज्य स्थापित करने में सफल रहे। हम इस पाठ में विजय और सुदृढ़ीकरण की इस प्रक्रिया का विवरण पढ़ेंगे। आइए भारत में बाबर के आगमन से शुरुआत करें।

बाबर का आगमन (1526-30)

बाबर अपने पिता की मृत्यु के बाद बारह वर्ष की उम्र में 1494 में ट्रांसऑक्सियाना की एक छोटी सी रियासत फरगना में सिंहासन पर बैठा। मध्यएशिया में स्थिति स्थिर नहीं थी और बाबर को कुलीन वर्ग से ही काफी प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। हालाँकि वह समरकंद पर कब्ज़ा करने में सक्षम था लेकिन बहुत जल्द ही उसे अपने कुछ सरदारों के छोड़ देने के कारण पीछे हटना पड़ा। उसने फरगना को भी उज़बेगों के हाथों खो दिया। इस प्रकार, मध्य एशिया में बाबर के शासन के प्रारंभिक वर्ष कठिन थे। इस पूरे कालखंड में उनकी योजना हिंदुस्तान की ओर बढ़ने की थी. और अंततः 1517 के बाद से उसने भारत की ओर निर्णायक कदम बढ़ाये। उस समय भारत में हुए कुछ घटनाक्रमों ने भी उसे भारत पर आक्रमण करने की योजना पर काम करने में मदद की।

सिकंदर लोदी की मृत्यु के बाद भारत में अस्थिर राजनीतिक स्थिति ने उन्हें लोदी साम्राज्य में राजनीतिक असंतोष और अव्यवस्था के बारे में आश्वस्त किया। इसी बीच कुछ अफगान सरदारों का इब्राहीम लोदी से संघर्ष हो गया। उनमें प्रमुख थे दौलत खान लोदी, जो पंजाब के एक बड़े हिस्से का गवर्नर था। मेवाड़ के राजपूत राजा राणा सांगा भी इब्राहिम लोदी के विरुद्ध अपना अधिकार जता रहे थे और उत्तर भारत में अपना प्रभाव क्षेत्र बढ़ाने का प्रयास कर रहे थे। इन दोनों ने बाबर को भारत पर आक्रमण करने के लिए संदेश भेजा। राणा सांगा और दौलत खान लोदी के निमंत्रण ने बाबर की महत्वाकांक्षाओं को बढ़ावा दिया होगा।

बाबर पंजाब में भीरा (1519-1520), सियालकोट (1520) और लाहौर (1524) पर कब्ज़ा करने में सफल रहा। अंततः इब्राहिम लोदी और बाबर की सेनाएं 1526 में पानीपत में मिलीं। बाबर

के सैनिक संख्या में कम थे लेकिन उसकी सेना का संगठन बेहतर था। पानीपत के युद्ध में इब्राहीम लोदी की हार हुई। पानीपत के युद्ध में सफलता बाबर की सैन्य रणनीति की एक बड़ी उपलब्धि थी। बाबर के पास केवल 12000 सैनिकों की सक्रिय सेना थी जबकि इब्राहिम की सेना की अनुमानित संख्या 100,000 सैनिकों की थी। युद्ध क्षेत्र में आमने-सामने होने पर बाबर की रणनीतियाँ अनोखी होती थीं। उन्होंने युद्ध की रूमी (ओटोमन) पद्धति को प्रभावी ढंग से लागू किया। उसने इब्राहीम की सेना को दो ओर से घेर लिया। केंद्र में उसकी घुड़सवार सेना ने विशेषज्ञ ओटोमन बंदूकधारियों द्वारा तीरों और बंदूक की गोलीबारी से हमला किया। खाइयों और बाड़ों ने दुश्मन के आक्रमण के खिलाफ पर्याप्त सुरक्षा प्रदान की। इब्राहीम लोदी की अफगान सेना को भारी क्षति उठानी पड़ी। इब्राहीम लोदी युद्ध क्षेत्र में मारा गया। इस प्रकार बाबर दिल्ली और आगरा पर कब्ज़ा करने में सक्षम हो गया और उसे लोदियों का समृद्ध खजाना मिल गया। यह धन बाबर के सेनापतियों और सैनिकों में बाँट दिया गया।

पानीपत की जीत ने बाबर को अपनी विजय को मजबूत करने के लिए एक मजबूत आधार प्रदान किया। लेकिन अब उन्हें कुछ समस्याओं का सामना करना पड़ा:

- उसके सरदार और सेनापति मध्य एशिया लौटने को उत्सुक थे क्योंकि उन्हें भारत की जलवायु पसंद नहीं थी। सांस्कृतिक रूप से भी वे बहुत अलग-थलग महसूस करते थे।
- मेवाड़ के राजा राणा सांगा के नेतृत्व में राजपूत लामबंद हो रहे थे और मुगल सेना को खदेड़ना चाहते थे।
- हालाँकि अफगानी पानीपत में पराजित हो गए, फिर भी उत्तर प्रदेश, बिहार और बंगाल के पूर्वी हिस्सों में एक दुर्जेय शक्ति थे।

वे अपनी खोई हुई शक्तियों को पुनः प्राप्त करने के लिए पुनः एकत्रित हो रहे थे। शुरुआत में बाबर ने अपने साथियों और सरदारों को यहीं रुकने और जीते हुए क्षेत्रों को मजबूत करने में मदद करने के लिए राजी किया। इस कठिन कार्य में सफल होने के बाद उसने अपने पुत्र हुमायूँ को पूर्वी अफगानों का सामना करने के लिए भेजा। मेवाड़ के राणा सांगा बड़ी संख्या में राजपूत सरदारों का समर्थन जुटाने में सफल रहे। इनमें से प्रमुख थे जालोर, सिरोही, डूंगरपुर, आमेर, मेड़ता आदि। चंदेरी के मेदिनी राय, मेवात के हसन खान और सिकंदर लोदी के छोटे बेटे महमूद लोदी भी अपनी सेना के साथ राणा में शामिल हो गए। संभवतः, राणा सांगा को उम्मीद थी कि बाबर काबुल लौट आएगा। बाबर के यहीं रुकने के निर्णय से राणा सांगा की महत्वाकांक्षाओं को बड़ा झटका लगा होगा। बाबर इस तथ्य से भी भली-भांति परिचित था कि जब तक वह राणा की शक्ति को नष्ट नहीं करेगा, उसके लिए भारत में अपनी स्थिति मजबूत करना असंभव होगा। बाबर और राणा सांगा की सेनाएँ फ़तेहपुर सीकरी के निकट खानवा नामक स्थान पर मिलीं। 1527 में राणा सांगा की हार हुई और एक बार फिर बाबर की बेहतर सैन्य रणनीति सफल हुई। राणा की पराजय से उत्तर भारत की सबसे बड़ी चुनौती ध्वस्त हो गयी।

हुमायूँ की वापसी और अफ़ग़ान पुनरुद्धार (1530-1540)

1530 में बाबर की मृत्यु के बाद उसका पुत्र हुमायूँ उसका उत्तराधिकारी बना। हुमायूँ के अधीन स्थिति काफी निराशाजनक थी। हुमायूँ के सामने मुख्य समस्याएँ थीं:

- नये जीते गए प्रदेशों और प्रशासन को समेकित नहीं किया गया था।

- बाबर के विपरीत, हुमायूँ को मुगल कुलीन वर्ग का आदर और सम्मान प्राप्त नहीं था।
- चगताई सरदारों का झुकाव उसके प्रति अनुकूल नहीं था और भारतीय सरदार, जो बाबर की सेवा में शामिल हो गए थे, हुमायूँ के राज्यारोहण के समय मुगलों को छोड़कर चले गए।
- उन्होंने अफगानों की शत्रुता का भी सामना किया, मुख्य रूप से एक ओर बिहार में शेर खान और दूसरी ओर गुजरात के शासक बहादुरशाह की।
- तैमुरिड परंपरा के अनुसार हुमायूँ को अपने भाइयों के साथ सत्ता साझा करनी थी। नव स्थापित मुगल साम्राज्य में सत्ता के दो केंद्र थे - हुमायूँ का दिल्ली, आगरा और मध्य भारत पर नियंत्रण था, जबकि उसके भाई कामरान के अधीन अफगानिस्तान और पंजाब थे।

हुमायूँ को लगा कि अफ़ग़ान एक बड़ा ख़तरा हैं। वह पूर्व और पश्चिम के अफगानों के संयुक्त विरोध से बचना चाहता था। उस समय बहादुर शाह ने भिलसा, रायसेन, उज्जैन और गागरोन पर कब्ज़ा कर लिया था और अपनी शक्ति मजबूत कर रहा था। जब हुमायूँ पूर्व में चुनार को घेर रहा था, बहादुर शाह ने मालवा और राजपूताना की ओर विस्तार करना शुरू कर दिया था। ऐसी स्थिति में हुमायूँ को वापस आगरा लौटने के लिए मजबूर होना पड़ा (1532-33)। अपनी विस्तारवादी नीति को जारी रखते हुए, बहादुर शाह ने 1534 में चित्तौड़ पर हमला किया। चित्तौड़ को रणनीतिक लाभ था क्योंकि यह एक मजबूत आधार प्रदान कर सकता था। इससे राजस्थान में विशेषकर अजमेर, नागौर और रणथंभौर की ओर उसके विस्तार में मदद मिलती। हुमायूं ने मांडू पर कब्जा कर लिया और वहां डेरा डाला क्योंकि उसने सोचा कि यहां से वह बहादुर शाह की गुजरात वापसी को रोक सकता है। आगरा से हुमायूँ की लंबी अनुपस्थिति के परिणामस्वरूप दोआब और आगरा में विद्रोह हुआ और उसे वापस भागना पड़ा। मांडू अब हुमायूं के भाई मिर्जा अस्करी के अधीन रह गया था। जिस काल में हुमायूँ गुजरात में बहादुरशाह पर लगाम लगाने में व्यस्त था, शेरशाह ने खुद को बिहार और बंगाल में मजबूत करना शुरू कर दिया।

मुगल शासन की चुनौतियाँ और संघर्ष

औरंगजेब के तहत, मुगल साम्राज्य अपनी सबसे बड़ी क्षेत्रीय सीमा तक पहुंच गया और इसने लगभग पूरे वर्तमान भारत को कवर कर लिया। लेकिन उनका शासनकाल जाटों, सतनामियों, अफगानों, सिखों और मराठों के लोकप्रिय विद्रोहों से प्रभावित हुआ। राजपूत अकबर के अधीन और बाद में जहाँगीर और शाहजहाँ के अधीन मुगलों के एक महत्वपूर्ण समर्थन आधार के रूप में उभरे। हालाँकि औरंगजेब के अधीन वे अलग-थलग महसूस करने लगे और धीरे-धीरे प्रशासनिक व्यवस्था में अपना स्थान खो बैठे। मराठों ने औरंगजेब के अधीन मुगलों की संप्रभुता के लिए एक बड़ी चुनौती पेश की। दक्कन के राज्यों ने मुगल विस्तार योजनाओं के खिलाफ कड़ा प्रतिरोध किया। उत्तर-पश्चिम सीमा क्षेत्र भी उपद्रव का स्थान था और मुगलों को उपद्रवों को दबाना पड़ा। इस प्रकार हम देखते हैं कि मुगल साम्राज्य की स्थापना और विस्तार की प्रक्रिया में मुगलों को प्रतिरोध का सामना करना पड़ा और उन्हें विभिन्न तरीकों और रणनीतियों के माध्यम से अपना रास्ता बनाना पड़ा। यहां हम इन सभी मुद्दों पर संक्षिप्त चर्चा करेंगे।

- **राजपूत**

मेवाड़ राजपूताना का एकमात्र क्षेत्र था जो अकबर के समय में मुगलों के अधीन नहीं आया था। जहाँगीर ने इस पर कब्ज़ा करने के लिए लगातार नीति अपनाई। कई संघर्षों के बाद, राणा अमर सिंह अंततः मुगल आधिपत्य स्वीकार करने के लिए सहमत हो गए। चित्तौड़ के किले सहित मेवाड़ से छीने गए सभी क्षेत्र राणा अमर सिंह को वापस कर दिए गए और उनके बेटे करण सिंह को एक बड़ी जागीर दी गई। जहाँगीर और शाहजहाँ के शासनकाल के दौरान, राजपूत आम तौर पर मुगलों के साथ मित्रवत बने रहे और बहुत ऊँचे मनसब रखते थे। शाहजहाँ ने दक्कन और उत्तर पश्चिम में अपने अभियानों के लिए राजपूत सैनिकों पर भरोसा किया। औरंगजेब के शासनकाल के दौरान, राजपूतों के साथ मुगल संबंधों में गिरावट आई, खासकर मारवाड़ के सिंहासन के उत्तराधिकारी के मुद्दे पर। उत्तराधिकार विवाद में औरंगजेब के हस्तक्षेप और प्रतिद्वंद्वी उम्मीदवार को उसके समर्थन ने राजपूतों को नाराज कर दिया। जोधपुर पर उनके कब्जे ने मुगल-राजपूत संबंधों को और खराब कर दिया और राजपूत धीरे-धीरे मुगल शासन से अलग हो गए। वास्तव में, कुलीन वर्ग में एक शक्तिशाली राजपूत वर्ग की अनुपस्थिति अंततः परिधीय क्षेत्रों पर मुगल नियंत्रण के लिए हानिकारक साबित हुई, खासकर जब मराठों के साथ बातचीत की बात आई।

- **दक्कन**

अकबर के अंतिम वर्षों और जहाँगीर के प्रारंभिक वर्षों के दौरान, मलिक अंबर के नेतृत्व में अहमदनगर ने मुगल सत्ता को चुनौती देना शुरू कर दिया। मलिक अम्बर बीजापुर का भी समर्थन प्राप्त करने में सफल हो गया। जहाँगीर द्वारा कई अभियान भेजे गए लेकिन कोई सफलता नहीं मिल पाई। शाहजहाँ के शासनकाल के दौरान, अहमदनगर, बीजापुर और गोलकुंडा के दक्कन राज्यों के साथ मुगल संघर्ष फिर से शुरू हो गया। अघमेदनगर को सबसे पहले पराजित किया गया और इसके अधिकांश क्षेत्रों को मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया। 1636 तक, बीजापुर और गोलकुंडा भी पराजित हो गये लेकिन ये राज्य मुगल साम्राज्य में शामिल नहीं किये गये। एक संधि के बाद पराजित शासकों को वार्षिक श्रद्धांजलि देनी पड़ी और मुगल सत्ता को मान्यता देनी पड़ी। लगभग दस वर्षों तक शाहजहाँ ने अपने पुत्र औरंगजेब को इस क्षेत्र में नियुक्त किया। औरंगजेब के शासनकाल में दक्कन राज्य और मराठों के साथ संघर्ष और अधिक तीव्र हो गया। वास्तव में, औरंगजेब ने अपने शासनकाल के अंतिम बीस वर्ष दक्कन में उनके खिलाफ लड़ते हुए बिताए। 1687 तक, बीजापुर और गोलकुंडा के दक्कनी साम्राज्य मुग़ल साम्राज्य में शामिल कर लिए गए। हालाँकि, औरंगजेब द्वारा दक्कन में बिताया गया समय और पैसा मुगल साम्राज्य के लिए बहुत बड़ा नुकसान साबित हुआ।

- **मराठा**

17वीं शताब्दी के मध्य में मराठा दक्कन में शिवाजी के नेतृत्व में एक महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में उभरे और मुगल सत्ता को चुनौती देने लगे। शिवाजी ने 1656 में अपना आक्रामक अभियान शुरू किया और जावली रियासत पर कब्ज़ा कर लिया। कुछ समय बाद, शिवाजी ने बीजापुर क्षेत्र पर छापा मारा और, 1659 में, बीजापुर के सुल्तान ने शिवाजी को पकड़ने के लिए अपने सेनापति अफ़ज़ल खान को भेजा। लेकिन शिवाजी उसके (अफ़ज़ल खान) लिए बहुत

चालाक थे और उसे मार डाला। अंततः, 1662 में, बीजापुर के सुल्तान ने शिवाजी के साथ एक शांति समझौता किया और उन्हें अपने विजित क्षेत्रों के एक स्वतंत्र शासक के रूप में स्वीकार किया। शिवाजी ने अब मुगल क्षेत्रों को उजाड़ना शुरू कर दिया। औरंगजेब ने दक्कन के वाइसराय शाइस्ता खान को शिवाजी के खिलाफ एक बड़ी सेना के साथ भेजा और दोनों के बीच पुरंधर की संधि (1665) पर हस्ताक्षर किए गए। शिवाजी के पास मौजूद 35 किलों में से वह 23 किलों को मुगलों को सौंपने के लिए सहमत हो गए। शेष 12 किले (एक लाख हूण की वार्षिक आय के साथ) शिवाजी को छोड़ दिए जाने थे। शिवाजी को आगरा में मुगल दरबार का दौरा करने के लिए कहा गया था। लेकिन, जब शिवाजी वहां गए तो उनके साथ दुर्व्यवहार किया गया और उन्हें बंदी बना लिया गया। वह भागने में सफल रहे और 1666 में रायगढ़ पहुंचे। तब से, उन्होंने मुगलों के खिलाफ लगातार संघर्ष किया। जल्द ही उसने उन सभी किलों को जीत लिया जो उसने मुगलों को सौंप दिये थे। 1670 में उसने सूरत को दूसरी बार लूटा। 1674 में शिवाजी ने रायगढ़ को अपनी राजधानी बनाया और अपना राज्याभिषेक मनाया और छत्रपति की उपाधि धारण की। इसके तुरंत बाद, उन्होंने दक्षिणी भारत में एक महान अभियान चलाया और जिंजी वेल्लोर और कर्नाटक के कई किलों पर विजय प्राप्त की। केवल छह वर्षों तक शासन करने के बाद 1680 में रायगढ़ में उनकी मृत्यु हो गई। इस अल्प समय में उन्होंने मराठा साम्राज्य की स्थापना की, जिसका डेढ़ शताब्दी तक पश्चिमी भारत पर प्रभुत्व रहा।

शिवाजी के उत्तराधिकारी उनके पुत्र संभाजी थे। कई मराठा सरदारों ने संभाजी का समर्थन नहीं किया और शिवाजी के दूसरे पुत्र राजाराम की मदद की। आंतरिक संघर्ष ने मराठा शक्ति को कमजोर कर दिया। अंततः संभाजी को पकड़ लिया गया और 1689 में औरंगजेब ने उन्हें मौत की सजा दे दी। संभाजी का उत्तराधिकारी राजाराम बना क्योंकि उसका पुत्र साहू अभी छोटा था। 1700 में राजाराम की मृत्यु हो गई। उनकी मां तारा बाई के शासनकाल में उनके नाबालिग बेटे शिवाजी तृतीय ने उनका उत्तराधिकारी बना लिया। मराठों के खिलाफ औरंगजेब की विफलता काफी हद तक तारा बाई की ऊर्जा और प्रशासनिक प्रतिभा के कारण थी। हालाँकि, मुगल मराठों को दो प्रतिद्वंद्वी शिविरों में विभाजित करने में सफल रहे- एक तारा बाई के अधीन और दूसरा संभाजी के पुत्र साहू के अधीन। साहू, जो लंबे समय तक मुगल दरबार में थे, को रिहा कर दिया गया। वह बालाजी विश्वनाथ नामक चितपावन ब्राह्मण की मदद से तारा बाई को पदच्युत करने में सफल रहे।

- **उत्तर पश्चिम**

अकबर ने हमेशा काबुल-गजनी-कंधार रेखा को रणनीतिक सीमा माना था और इसलिए, 1595 में कंधार पर कब्जा कर लिया। 17वीं शताब्दी के दौरान उत्तर-पश्चिमी सीमा मुगलों की गतिविधि का मुख्य क्षेत्र थी। यहां, 1625-26 तक रोशनाई निर्णायक रूप से हार गए, लेकिन कंधार फारसियों और मुगलों के बीच संघर्ष का क्षेत्र बन गया। अकबर की मृत्यु के बाद, फारसियों ने कंधार पर कब्ज़ा करने की कोशिश की, लेकिन सफ़वी शासक शाह अब्बास प्रथम के अधीन असफल रहे।

इसके बाद, 1620 में शाह अब्बास प्रथम ने जहांगीर से कंधार उसे सौंपने का अनुरोध किया, लेकिन उसने ऐसा करने से इनकार कर दिया। 1622 में, एक और हमले के बाद, कंधार पर

फारसियों ने कब्जा कर लिया। शाहजहाँ के अधीन, कंधार एक बार फिर मुग़लों के हाथ में आ गया, लेकिन 1649 में फारसियों ने उस पर पुनः कब्ज़ा कर लिया। कंधार पर कब्ज़ा करने का संघर्ष औरंगज़ेब के शासनकाल तक जारी रहा लेकिन मुग़लों को बहुत कम सफलता मिली। उज्बेक्स (जनजाति) को नियंत्रण में रखने के लिए शाहजहाँ का बल्ख अभियान बुरी तरह विफल रहा और मुगलों को संघर्ष में भारी मात्रा में धन और लोगों की हानि हुई। औरंगजेब के शासनकाल के दौरान, कंधार मुद्दा हटा दिया गया और फारस के साथ राजनयिक संबंध पुनर्जीवित किए गए।

यह बिल्कुल स्पष्ट है कि अकबर के अधीन मुग़ल साम्राज्य का क्षेत्रीय विस्तार साम्राज्य का मूल बना रहा। औरंगजेब के शासनकाल में इसका और अधिक विस्तार दक्कन और उत्तर-पूर्व क्षेत्र में थोड़ा-बहुत हुआ। उनके काल में मुगल साम्राज्य का क्षेत्रफल सबसे अधिक था। हालाँकि, मुग़ल साम्राज्य के पतन की शुरुआत औरंगज़ेब के शासनकाल से भी मानी जा सकती है। राजपूतों जैसी शक्तिशाली क्षेत्रीय ताकतों के साथ संबंध टूटने और दक्कनी राज्यों और मराठों के साथ असफल संबंधों ने मुगल साम्राज्य की एकता और स्थिरता को हिला दिया। उसके उत्तराधिकारियों के अधीन साम्राज्य विघटित होता गया।

निष्कर्ष

यह उसके लिए स्वाभाविक प्रगति होगी। इस स्थान पर उनका आगमन एक पूर्वनिर्धारित निष्कर्ष था जिसे टाला नहीं जा सकता था। जब राजकुमार सलीम अजमेर में थे, तो उन्होंने मान सिंह को एक साजिश को अंजाम देने का आदेश दिया, जिसके परिणामस्वरूप अंततः मेवाड़ में सब कुछ नष्ट हो जाएगा। इस षडयंत्र के परिणामस्वरूप अंततः मेवाड़ में सब कुछ नष्ट हो जाएगा। इन्हीं दिशानिर्देशों के कारण मान सिंह कार्यक्रम को अंजाम देने में सफल रहे। फलस्वरूप कार्यक्रम सफल रहा। इस नीति को क्रियान्वित करने का निर्देश, जो अपेक्षित था, मान सिंह को दिया गया, जिन्हें इसे क्रियान्वित करने की जिम्मेदारी सौंपी गई। इस दृष्टिकोण के परिणामस्वरूप, शाही सेना को ऐसी प्रतिष्ठा प्राप्त हुई जो अनुकूल नहीं थी, और इसके परिणामस्वरूप, मेवाड़ की पूरी जनता में शाही सरकार के प्रशासन के प्रति बुरा रवैया बन गया। यह नीति शाही सेना द्वारा अर्जित प्रतिष्ठा के लिए उत्तरदायी थी। इस तथ्य के प्रकाश में कि मैदानी इलाकों में शाही सेना से लड़ने का राणा अमर सिंह का प्रयास असफल रहा, परिदृश्य ने उन्हें पहाड़ियों पर पीछे हटने के लिए प्रेरित किया। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि अन्य इलाकों की तुलना में पहाड़ियों तक पहुंचना अधिक चुनौतीपूर्ण था। नतीजतन, राणा अमर सिंह को उन स्थितियों के परिणामस्वरूप छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा, जिनमें वे थे। इससे शाही सैनिकों के लिए इस क्षेत्र में रहना असंभव हो गया क्योंकि मेवाड़ के गांवों और कस्बों में रहने वाले लोगों की आबादी कम थी। घनत्व, मुगलों के प्रभुत्व के आगे झुकने से इनकार कर दिया। इससे शाही सैनिकों के लिए इस स्थान पर लंबे समय तक रहना असंभव हो गया।

संदर्भ

1. गांधी, एसएस (2007)। सिख गुरुओं का इतिहास दोबारा बताया गया: 1469-1606 ई. (खंड 1)। अटलांटिक प्रकाशक और जिला।
2. घोष, आर. (2008). स्मृति, आख्यान और इतिहास का कार्य। रिविस्टा इंटरनैजियोनेल डि

स्टोरिया डेला स्टोरिओग्राफिया , (54), 56-88.

3. धार, एस. (2017)। भारत का बच्चों का इतिहास. प्रकाशन विभाग सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय।
4. वार्ड, पी. (1989)। उत्तरी भारत, राजस्थान, आगरा, दिल्ली: एक यात्रा गाइड। पेलिकन प्रकाशन।
5. मैक्लेन, केएम (2005)। किसकी अमर चित्र कथाएँ?: अमर चित्र कथा और भारतीय अस्मिताओं का निर्माण।
6. बख्शी, एसआर, शर्मा, एसआर, और गजरानी , एस. (सं.). (1998)। बंसीलाल, हरियाणा के मुख्यमंत्री। एपीएच प्रकाशन।
7. किनकैड, सीए, और परासनिसा , डीबी (1918)। मराठा लोगों का इतिहास: प्रारंभिक काल से शिवाजी की मृत्यु तक (खंड 1)। एच. मिलफोर्ड, ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
8. जानकीरमन , एम. (2020)। भारतीय इतिहास में परिप्रेक्ष्य: मूल से 1857 ई. तक। नोशन प्रेस।
9. घोषाल, एचआर (2017)। भारतीय लोगों का एक रूपरेखा इतिहास। प्रकाशन विभाग सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय।
10. भट्ट, एस. (2008). कश्मीरी विद्वानों का ज्ञान और विश्व शांति में योगदान: कश्मीर एजुकेशन कल्चर एंड साइंस सोसाइटी (केईसीएसएस), नई दिल्ली द्वारा राष्ट्रीय संगोष्ठी की कार्यवाही। एपीएच प्रकाशन।
11. सिंह, एम. (2006). हिन्दू धर्म में दलित की विरासत. ज्ञान पब्लिशिंग हाउस.
12. सचदेव, वी. (2001)। डिज़ाइन द्वारा मंडला। रेत में पत्थर: राजस्थान की वास्तुकला। मार्ग प्रकाशन, मुंबई, 28-41।
13. वॉन गार्बे, आर. (2014)। अकबर, भारत के सम्राट. लुलु. com.
14. मलकानी, केआर (2021)। द मिडनाइट नॉक: केआर मलकानी की बेस्टसेलर पुस्तक: द मिडनाइट नॉक। प्रभात प्रकाशन .